आतस दुनीआ खुनक नामु खुदाइआ ।।
कलि ताती ठांढा हरि नाउ ।।

भाग — 5

इस लेख के पिछले भागों में बताया जा चुका है कि **हमारे अन्दर —**

ईर्ष्या
द्वेष
गिनती
शक
जलन
चिंता
तृष्णा
रोष
शिकायत
वैर
विरोध
काम
क्रोध
लोभ
मोह
अहंकार
मैं-मेरी

ने 'मानसिक अग्नि' की लपटें जला रखी हैं, तथा —

गरीबी

दरिद्रता

भूख

प्यास

रोग

दुख

क्लेश

चिंता

अविश्वास

मनमुखता

नीच पन

ढिठाई

आदि, **की मार ने कमर तोड़ दी है ।**

इस प्रकार हमारा —

शरीर तपा हुआ

जीवन क्षेत्र तपा

वृत्तियाँ तपी

काम तपा

क्रोध तपा

लोभ तपा

मोह तपा

मैं-मेरी तपी

तृष्णा तपी आग

गरीबी तपी आग

विलासता निरी आग

मन तपा

चित्त तपा
प्यार तपा
बाहरमुख वृत्तियाँ तपी हुई
बाहर भी आग
अन्दर भी आग
दीन भी आग
दुनिया भी आग

चारों ओर आग ही आग की लपटें निकल रही हैं ।

यहाँ एक और जरूरी नुक्ता समझने की आवश्यकता है ।

पिछले भागों में बताया जा चुका है कि जब वृत्तियां **बाहर मुख होकर,** मायिकी तृष्णा की पूर्ति के लिए दौड़ती हैं, तो —

दौड़ने की क्रिया से वृत्तियों में **गर्मी** पैदा होती है ।

तृष्णापूर्ण विचारों या रुचियों द्वारा **'आग' भड़क उठती है ।**

तृष्णा पूर्ति में इस **आग की भीषण लपटें प्रज्जवलित हो उठती हैं ।**

इस का अभिप्राय यह हुआ कि हमारी वृत्तियों का मायिकी मंडल में—

बाहर-मुख होकर विचरण करना या दौड़ना

ही 'अग्नि-शोक-सागर' का मूल कारण है ।

दूसरी ओर वृत्तियों को —

अन्तर्मुख करके अथवा एकाग्र करके
नाम सिमरन करना ही —
'ठांढा हरि नाउ'
का 'उद्यम' तथा प्राप्ति है।

परन्तु यह अन्तर्मुख खेल,अथवा —

वृत्तियों को **बाहर से मोड़ कर** अन्दर की और करना,

वृत्तियों को एकाग्र करके **सुरति द्वारा** सिमरन करना,

अति **सूक्ष्म तथा कठिन** खेल है ।

जन नानक इहु खेलु कठनु है किनहूं गुरमुखि जाना ।। (पृ.219)

यदि गौर पूर्वक विचार की जाये तो पता लगेगा, कि इस **'मानसिक अग्नि' का ताप** — पहले हमारे मन की **वृतियों** को लगता है, फिर इसका प्रभाव मन, बुद्वि तथा शरीर पर पड़ता है ।

त्रिगुणी मायिकी मंडल में 'अहम्' का **भ्रम-भुलाव है ।**

इस भ्रम-भुलाव में से **'अहम्'** उत्पन्न होता है ।

अहम् में से **'पाँच व्याधियाँ'** उत्पन्न होती हैं ।

इन पाँच **व्याधियों**— काम, क्रोध, लोभ, मोह, तथा अहंकार ने संसार में मानसिक अग्नि की प्रचंड ज्वाला प्रज्जवलित कर रखी है ।

इस **भीषण अग्नि** को गुरबाणी में —

'आतस दुनिया'
'कलि ताती'
'अगन-कुंट'
'अगन-शोक-सागर'
'पावक-सागर'

बताया गया है ।

जीव की अन्तर-आत्मा में दैवीय —

निज घर
सच घर
हरि का धाम
स्थिर घर

अटल स्थान

बेगम पुरा

बैकुंठ नगर

अविचल नगर

आपनड़ा घर

सूख महल

अनुभव नगर

सहज घर

अविनाशी महल

सच खंड

का निवास है, जिस में —

सुख है

शान्ति है

ठंडक है

प्रीत है

प्यार है

चाव है

आत्म रंग है

आत्म रस है

प्रेम स्वैपना है

कुशल मंगल है

सदा खैर है

सदा खुशी है

सदा बख्शिश है

प्रिम प्याला है

रुन झुन है

अनहद धुन है

शबद है

नाम है ।

इन दोनों मंडलों के गुण-अवगुण, एक दूसरे से बिल्कुल विपरीत अथवा उलट हैं ।

जीव के लिए इन दोनों मंडलों —

आतस दुनिया

तथा

खुनक नामु खुदाइआ

में से 'चयन' करना अनिवार्य है ।

यह चयन अति दीर्घ, आवश्यक तथा महत्वपूर्ण है ।

इस चयन या निर्णय के **बिना,** हमें **'मार्ग-दर्शन'** नहीं मिल सकता ।

उचित 'मार्ग दर्शन' के बिना हम पुराने 'जीवन-प्रवाह' में ही बहते रहेंगे तथा दुख-क्लेश भोगते रहेंगे ।

इस लेख के पिछले भाग में बताया जा चुका है कि 'जीव' के लिए इस आत्मिक 'जीवन-सीध' का —

निर्णय

चयन

चाव

उद्यम

निश्चय

श्रद्धा

कमाई

करने में 'साध-संगति' द्वारा मार्ग दर्शन तथा सहायता की अत्यन्त आवश्यकता है ।

ये समस्त तुच्छ भावनाएँ तथा वासनाएँ भी, हमारी गुप्त आन्तरिक अग्नि का प्रतीक तथा प्रकटाव हैं ।

गुरबाणी के प्रकाश तथा गुरमुख प्यारों, महापुरुषों की संगत द्वारा ही, जीव को ज्ञान तथा निश्चय हो सकता है, कि उसके अन्दर भी यह **गुप्त मानसिक अग्नि विद्यमान है ।**

इसी लिए गुरबाणी में इस गुप्त अग्नि से **बचाव का** सब से सरल तथा प्रभावशाली साधन **'साध संगति'** ही बताया गया है ।

दीन दइआल क्रिपाल प्रभ नानक
साधसंगि मेरी जलनि बुझाई ।। (पृ. 204)

भइओ क्रिपालु सतसंगि मिलाइआ ।।
बूझी तपति घरहि पिरु पाइआ ।। (पृ. 738)

पावन-पवित्र आत्मिक साध संगति में ही इस **'गुप्त मानसिक अग्नि'** के विषय में —

समझ आयेगी
ज्ञान होगा
मन एकाग्र होगा
मन शान्त होगा
मन शीतल होगा
सेवा करने की विधि आयेगी
दैवीय भावनाएं उत्पन्न होंगी

सिमरन का चाव उठेगा
मन प्रेम से परिपूर्ण होगा
प्रेम-स्वैपना का रस पान करेगा
प्रिम-रस में मस्त होगा
शबद सुरति का मेल होगा
नाम-औषधि की बरख्शिश होगी
चरण-शरण प्राप्त होगी।

ऐसी दिव्य बरख्शिशों वाली साध संगति को गुरबाणी में यूँ दर्शाया गया है—

सतसंगति कैसी जाणीऐ ।।
जिथै एको नामु वखाणीऐ ।। (पृ. 72)

ऊहा जपीऐ केवल नाम ।।
साधू संगति पारगराम ।। (पृ. 1182)

In other words - only the illuminated souls can up-lift the soul of the Aspirant from Wordly consciousness to Divine Consciousness, and thus save him from the burning hell of wordly quagmire.

साध संगति के बिना हमारा मन इस गुप्त मानसिक अग्नि से बच नहीं सकता तथा न ही इस 'अग्नि-शोक- सागर' में से निकल सकता है ।

महा अभाग अभाग है जिन के तिन साधू धूरि न पीजै ।।
तिना तिसना जलत जलत नही बूझहि
डंडु धरम राइ का दीजै ।। (पृ. 1325)

इसी कारण गुरबाणी में, इस भीतरी मानसिक अग्नि को बुझाने का सब से सरल तथा आवश्यक साधन 'साध संगति' ही बताया गया है —

आपु छोडि बेनती करहु ॥
साधसंगि अगनि सागरु तरहु ॥ (पृ. 295)

अगनि सागर भए सीतल साध अंचल गहि रहे ॥ (पृ. 458)

ठांढि परी संतह संगि बसिआ ॥
अंम्रित नामु तहा जीअ रसिआ ॥ (पृ. 256)

संत संगि जा का मनु सीतलु ओहु जाणै सगली ठांढी ॥
(पृ. 610)

परन्तु 'सत संगत' अथवा 'साध संगत' के विषय में भी भ्रान्तियाँ फैली हुई हैं। इन भ्रान्तियों का निर्णय करने की आवश्यकता है।

साधारणतया व्यक्तियों के समूह को 'साध संगत' या सत संगत' कहा जाता है, परन्तु गुरबाणी के आशय अनुसार —

बख्शे हुए
महापुरुषों
संतों
साधू जनों
भक्तों
'सिमरन' वालों
'शबद-सुरति' में पिरोये हुए
अनहद-शबद में विलीन हुए
गुरू-प्रेम में रंगे हुए
'बै-खरीद' सेवकों
'नानक घर' के सेवकों

'प्रेम-स्वैपना' की मस्ती वाले
'प्रेम-रस' में अलमस्त हुए
'प्रेम-प्याले' से नशयी हुए
'चुप प्रीत' में मतवाले हुए

गुरमुख प्यारों की संगत को ही —

सत-संगत
साध-संगत
संत-मंडली
दिव्य-संगत
श्रेष्ट-संगत
पावन संगत
आत्म संगत
'संत सज्जन परिवार'

कहा जा सकता है।

गुरबाणी में ऐसी आत्मिक साध संगत की प्रशंसा इस प्रकार की गई है—

धनु धनु सतसंगति जितु हरि रसु पाइआ
मिलि जन नानक नामु परगासि ।। (पृ. 10)

महिमा साधू संग की सुनहु मेरे मीता ।।
मैलु खोई कोटि अघ हरे निरमल भए चीता ।। (पृ. 809)

भेटत संगि पारब्रहमु चिति आइआ ।।
संगति करत संतोखु मनि पाइआ ।। (पृ. 889)

संत मंडल महि हरि मनि वसै ।।
संत मंडल महि दुरतु सभु नसै ।।
संत मंडल महि निरमल रीति ।।

संतसंगि होइ एक परीति ।।
संत मंडलु तहा का नाउ ।।
पारब्रहम केवल गुण गाउ ।। (पृ. 1146)

मेरा मनु साध जनां मिलि हरिआ ।।
हउ बलि बलि बलि बलि साध जनां कउ
मिलि संगति पारि उतरिआ ।।.....

हरि के संत संत भल नीके मिलि संत जना मलु लहीआ ।।
हउमै दुरतु गइआ सभु नीकरि जिउ साबुनि कापरु करिआ ।।
(पृ. 1294)

परन्तु, ऐसी उत्तम-पावन आत्मिक संगत गुरु की **कृपा से ही मिलती है —**

किरपा करे जिसु पारब्रहमु होवै साधू संगु ।।
जिउ जिउ ओहु वधाईऐ तिउ तिउ हरि सिउ रंगु ।। (पृ. 71)

किरपा निधि किरपाल धिआवउ ।।
साधसंगि ता बैठणु पावउ ।। (पृ. 183)

हरि कीरति साधसंगति है सिरि करमन कै करमा ।।
कहु नानक तिसु भइओ परापति जिसु पुरब लिखे का लहना ।।
(पृ. 642)

परन्तु, दुनिया में ऐसे गुरमुख जन **विरले ही होते हैं —**

दावा अगनि बहुतु त्रिण जाले कोई हरिआ बूटु रहिओ री ।।
(पृ. 384)

जिन्हा दिसंदड़िआ दुरमति वंञै मित्र असाडड़े सेई ।।
हउ ढूढेदी जगु सबाइआ जन नानक विरले केई ।।
(पृ. 520)

ऐसे जन विरले संसारे ॥
गुर सबदु वीचारहि रहहि निरारे ॥ (पृ. 1039)

ऐसी उत्तम-श्रेष्ठ —

नाम-रस
आत्म-रंग
जीवन्त
थरथराती हुई
रून झुन लगाती हुई
आत्म-छुह वाली
चुप-प्रीत वाली

'संत-मंडली' को ही 'साध संगति' माना गया है ।

ऐसी 'साध संगति' के आत्म प्रभाव में जिज्ञासुओं के मन की वृत्तियां दुनिया से हट कर अपने 'आत्मन' में जुड़ती हैं ।

'अनहद शबद' की रुनझुन' छिड़ती है तथा मन —

शान्त होता है ।
जागृत हो जाता है ।
आत्म छुह की 'सिहरन' छिड़ती है ।
सिहरन में 'रुनझुन' महसूस होती है ।
अन्तर-आत्मा की ओर आकर्षित होता है ।
प्रेम की तारें झंकृत हो उठती हैं ।
प्रेम-स्वैपना की सूक्ष्म थरथराहट होती है ।
आत्म-प्रेम से आकर्षित होता है ।
प्रेम उमंगों की उड़ानें लगती हैं ।

प्रेम प्रकाश में विलीन होता है ।

प्रेम-रस की 'सूक्ष्म तरंगें' अनुभव करता है ।

ईश्वरीय राग की धुन बजती है ।

अनहद धुन सुनायी देती है ।

ईश्वरीय राग में 'मग्नता' आती है ।

मग्नता में 'बे-खुदी' होती है ।

बे-खुदी में विस्माद होता है ।

प्रेम-प्याले की खुमारी चढ़ती है ।

खुमारी में आँखें नशयी हो जाती हैं ।

नशयी आंखों में 'आत्मिक चमक' होती है ।

चमकती आंखों में नूर होता है ।

नूरानी आंखों में 'प्रेम की झलक' होती है ।

प्रेम की झलक में 'आकर्षण' होता है ।

ईश्वरीय झलक में 'दिव्य संदेश' होते हैं ।

दिव्य संदेशों में 'शबद' का प्रकाश होता है ।

शबद के प्रकाश में 'नाम का रस' होता है ।

'चुप-प्रीत' के सौदे होते हैं ।

आत्म रंग का 'व्यापार' होता है ।

महा-रस का 'आदान-प्रदान' होता है ।

'नउ निध नाम' की 'सांझ' होती है ।

'अंमृित नाम भोजन' बँटता है ।

'खावहि खरचहि रलि मिलि भाई' का व्यवहार होता है ।

मन को 'नावै का रंग' चढ़ता है ।

साध संगत के दामनिक अथवा आत्मिक प्रभाव को यूँ स्पष्ट किया जाता है —

'गुरमुख प्यारों का मेल' ही विचार - विमर्श या **'प्रचार'** का सरल तथा असरदायक साधन है। एक दूसरे के मन पर विचारों का **प्रभाव डालने के लिए** एक ओर — विचारों की दृढ़ता तथा श्रद्धा भावना की तीव्रता तथा दूसरी ओर — **ग्रहण करने की शक्ति आवश्यक है ।**

दृढ़ विश्वास तथा गहरी श्रद्धा भाव वाले मन के प्रभाव से साधारण मन पर **सहज ही असर पड़ता है ।**

किसी संगत के समूह में जहां मौखिक दिमागी प्रचार का प्रभाव थोड़े समय के लिए नाममात्र सा होता है, वहाँ आत्मिक जीवन वाले महापुरुषों की संगत में सम्मिलित होते ही, उनके जीवन से उत्पन्न तीक्ष्ण आत्मिक किरणें, जिज्ञासुओं की रूह को जागृत करके, चुप-चाप ही, उनका जीवन बदल सकती हैं ।

यही नियम महापुरुषों की रचनाओं पर भी लागू होता है जो उनके आत्मिक अनुभवी ज्ञान तथा दृढ़ श्रद्धा-भाव से उत्पन्न होती हैं। यह रचनाएँ आत्मिक मंडल के अनुभवी प्रकाश का प्रकटाव होती हैं तथा सदा पूर्णतया निर्मल, तरोताजा, दिव्य किरणें होती हैं, जो अन्य रूहों को 'बेधकर' आत्मिक चिंगारी से जागृत करने की शक्ति रखती हैं ।

यदि शक्तिशाली मन — साधारण मन के दिमागी भावों की 'सतह' पर इतना प्रभाव डाल सकता है, तब बख्शे हुए आत्मिक जीवन वाले महापुरुषों की दैवीय किरणें जिज्ञासुओं की रूह को —

'आत्म-छुह' द्वारा

चुप-चाप की 'लाग' द्वारा

बेध कर

जागृत करके

ईश्वरीय प्रकाश के मंडल में पहुँचाने की 'शक्ति' रखती हैं ।

स्थूल स्तर पर, यदि लेज़र रेज़ (laser rays) धातु की मोटी चादरों में छिद्र कर सकती हैं तथा परमाणु बम्ब में से निकली हुई रेडियो-धर्मी किरणें (Radio-active rays) इतनी तबाही कर सकती हैं, तब बख्शे हुए महापुरुषों अथवा सतसंगत में से निकली हुई तीक्ष्ण आत्मिक किरणें भी, माया के **मोटे, सबल मानसिक 'आवरण'** अथवा **भ्रम के काले-घने बादल चीर कर**, जीव की आत्मा को 'छू' सकती हैं, तथा आत्मिक प्रकाश-मयी मंडल की **झलक** (Divine glimpses) दिखा सकती हैं ।

इस प्रकार आत्मिक जीवन में से उत्पन्न किरणें, जिज्ञासु की रूह को चुप चाप ही बदल देती हैं तथा उनका आत्मिक मंडल में **'नया जन्म'** होता है । पाँच प्यारों द्वारा अमृत पान कराना भी गुरमति के इसी नियम पर आधारित है ।

आत्मिक मंडल में प्रवेश पाने के लिए, यह उत्तम, पवित्र एवं सरल युक्ति है, परन्तु इसकी कीमत —

'आपु गवाइ सेवा करे' है ।

ऐसे उच्च पवित्र आत्मिक जीवन वाले, बख्शे हुए महापुरुष विरले ही होते हैं तथा उनकी **पहचान** और **'मेल' या 'संगत' भाग्यशाली रूहों को ही प्राप्त होती है** । इस वास्तविकता को गुरबाणी की निम्नांकित

पंक्तियां अपने-आप ही स्पष्ट कर देती हैं —

पूरब करम अंकुर जब प्रगटे भेटिओ पुरखु रसिक बैरागी ।।
मिटिओ अंधेरु मिलत हरि नानक जनम जनम की सोई जागी ।।
(पृ. 204)

किरपा करे जिसु पारब्रहमु होवै साधू संगु ।।
जिउ जिउ ओहु वधाईऐ तिउ तिउ हरि सिउ रंगु ।। (पृ. 71)

हउ वारी जीउ वारी कलि महि नामु सुणावणिआ ।।
संत पिआरे सचै धारे वडभागी दरसनु पावणिआ ।। (पृ. 130)

जे वड भाग होवहि वड मेरे
जन मिलदिआ ढिल न लाईऐ ।। (पृ. 881)

सतसंगति महि नामु निरमोलकु वडै भागि पाइआ जाई ।।
(पृ. 909)

(क्रमशः .....)